4 अमरकान्त

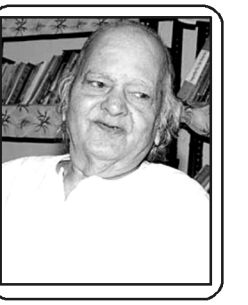

व्यक्तित्व

अमरकान्त का जन्म सन् 1925 ई० में बलिया (उ०प्र०) में हुआ। आपके पिता का नाम सीताराम वर्मा है। आपकी शिक्षा बलिया, गोरखपुर तथा प्रयाग में हुई। बी० ए० तक आपने शिक्षा प्राप्त की। सन् 1942 के असहयोग-आन्दोलन में आपने भाग लिया। आपकी आस्था प्रगतिशील जीवनदृष्टि में है। पत्रकारिता में आपकी विशेष रुचि है। 'सैनिक', 'अमृतपत्रिका', 'कहानी' आदि पत्र-पत्रिकाओं से सम्बद्ध रहे। 'मनोरमा' पत्रिका का भी आपने सम्पादन किया। पहली कहानी, 'बाबू' आगरा के 'सैनिक' पत्र में छपी। गम्भीर साहित्यिक प्रयास इसके एक वर्ष बाद 'इण्टरव्यू' कहानी से आरम्भ हुआ। 13 मार्च, 2012 को इन्हें ज्ञानपीठ पुरस्कार से सम्मानित किया गया। इनका देहावसान 17 फरवरी, 2014 को इलाहाबाद में हुआ।

कृतित्व

अमरकान्त के तीन कथा-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं—**'जिन्दगी और जोंक', 'देश के लोग'** और **'मौत का नगर'**। आपने उपन्यास भी लिखे हैं जैसे—**'सूखा पत्ता', 'काले-उजले दिन', 'आकाश पक्षी', 'पराई डाल का पक्षी', 'दीवार और आँगन'** तथा **'कँटीली राह के फूल'**।

कथा-शिल्प एवं भाषा-शैली

अमरकान्त ने निहायत साधारण जीवन की घटनाओं और स्थितियों को अपनी कहानियों का विषय बनाया है। बिना किसी विशेष आग्रह के उद्दाम मानवीय जिजीविषा का मूर्तीकरण आपकी निजी विशेषता है। आपमें गहरी अन्तर्दृष्टि और संवेदना है। अपने कथा-पात्रों से उन्हें केवल सहानुभूति नहीं होती, वरन् वे उन्हीं के साथ जीते हैं। अधिकतर कहानियों में नवीन आर्थिक परिस्थितियों से जूझते मध्यवर्गीय समाज की समस्याओं, विशेषताओं, पीड़ाओं, प्रवंचनाओं और जीवन की भूख का मर्मवेधी चित्रण किया गया है। यह कहना सही होगा कि अमरकान्त के नाम के बिना आज की नयी कहानी की कोई भी चर्चा अधूरी है। **'इण्टरव्यू', 'डिप्टी कलक्टरी', 'मौत का नगर', 'हत्यारे', 'मूस', 'दोपहर का भोजन', 'गगनविहारी', 'घुड़सवार', 'छिपकली', 'मित्रमिलन', 'लड़का-लड़की'** आदि आप की श्रेष्ठ कहानियाँ हैं।

अमरकान्त की कथा-शैली सरल और सहज है, उसमें किसी प्रकार दुराव-छिपाव, वक्रता अथवा 'फैशन' नहीं है। आपकी कहानियों में बोधगम्यता और सादगी है—कलायुक्तिहीन सादगी, किन्तु उनका बहाव दुर्निवार है। पात्र के अनुकूल भाषा का प्रयोग करना इनकी विशेषता है। इनकी शैली अधिकांशतः वर्णनात्मक है। इनकी भाषा-शैली एक सफल कहानीकार के सर्वथा अनुरूप है। उनमें सामाजिक व्यंग्य की विशेषता देखने को मिलेगी। अन्तिम प्रभाव करुणामूलक हुआ करता है। अमरकान्त की कहानियाँ पत्थर की तरह ठोस और कंक्रीट की तरह शक्तिसम्पन्न हैं। 'जिन्दगी और जोंक' आपकी प्रसिद्ध कहानी है, जिसने यथार्थवादी कहानी की परम्परा को एक नवीन स्तर पर लाकर खड़ा कर दिया है।

बहादुर

सहसा मैं काफी गम्भीर हो गया था, जैसा कि उस व्यक्ति को हो जाना चाहिए, जिस पर एक भारी दायित्व आ गया हो। वह सामने खड़ा था और आँखों को बुरी तरह मलका रहा था। बारह-तेरह वर्ष की उम्र। ठिगना चकइठ शरीर, गोरा रंग और चपटा मुँह। वह सफेद नेकर, आधी बाँह की ही सफेद कमीज और भूरे रंग का पुराना जूता पहने था। उसके गले में स्काउटों की तरह एक रूमाल बँधा था। उसको घेरकर परिवार के अन्य लोग खड़े थे। निर्मला चमकती दृष्टि से कभी लड़के को देखती और कभी मुझको और अपने भाई को। निश्चय ही वह पंच-बराबर हो गयी थी।

उसको लेकर मेरे साले साहब आये थे। नौकर रखना कई कारणों से बहुत जरूरी हो गया था। मेरे सभी भाई और रिश्तेदार अच्छे ओहदों पर थे और उन सभी के यहाँ नौकर थे। मैं जब बहन की शादी में घर गया तो वहाँ नौकरों का सुख देखा। मेरी दोनों भाभियाँ रानी की तरह बैठकर चारपाइयाँ तोड़ती थीं, जब कि निर्मला को सबेरे से लेकर रात तक खटना पड़ता था। मैं ईर्ष्या से जल गया। इसके बाद नौकरी पर वापस आया तो निर्मला दोनों जून 'नौकर चाकर' की माला जपने लगी। उसकी तरह अभागिन और दुखिया स्त्री और भी कोई इस दुनिया में होगी? वे लोग दूसरे होते हैं, जिनके भाग्य में नौकर का सुख होता है.....।

पहले साले साहब से असाधारण विस्तार से उसका किस्सा सुनना पड़ा। वह एक नेपाली था, जिसका गाँव नेपाल और बिहार की सीमा पर था। उसका बाप युद्ध में मारा गया था और उसकी माँ सारे परिवार का भरण-पोषण करती थी। माँ उसकी बड़ी गुस्सैल थी और उसको बहुत मारती थी। माँ चाहती थी कि लड़का घर के काम-धाम में हाथ बंटाये, जबकि वह पहाड़ या जंगलों में निकल जाता और पेड़ों पर चढ़कर चिड़ियों के घोंसलों में हाथ डालकर उनके बच्चे पकड़ता या फल तोड़-तोड़कर खाता। कभी-कभी वह पशुओं को चराने के लिए ले जाता था। उसने एक बार उस भैंस को बहुत मारा, जिसको उसकी माँ बहुत प्यार करती थी, और इसीलिए उससे वह बहुत चिढ़ता था। मार खाकर भैंस भागी-भागी उसकी माँ के पास चली गयी, जो कुछ दूरी पर एक खेत में काम कर रही थी। माँ का माथा ठनका। बेचारा बेजबान जानवर चरना छोड़कर यहाँ क्यों आयेगा? जरूर लौंडे ने इसको काफी मारा है। वह गुस्से से पागल हो गयी। जब लड़का आया तो माँ ने भैंस की मार का काल्पनिक अनुमान करके एक डण्डे से उसकी दुगुनी पिटाई की और उसको वहीं कराहता हुआ छोड़कर घर लौट आयी। लड़के का मन माँ से फट गया और वह रात भर जंगल में छिपा रहा। जब सबेरा होने को आया तो वह घर पहुँचा और किसी तरह अन्दर चोरी-चुपके घुस गया। फिर उसने घी की हँडिया में हाथ डालकर माँ के रखे रुपयों में से दो रुपये निकाल लिये। अन्त में नौ-दो ग्यारह हो गया। वहाँ से छह मील की दूरी पर बस-स्टेशन था, जहाँ गोरखपुर जानेवाली बस मिलती थी।

—तुम्हारा नाम क्या है जी?—मैंने पूछा।

—दिलबहादुर, साब।

उसके स्वर में एक मीठी झनझनाहट थी। मुझे ठीक-ठीक याद नहीं कि मैंने उसको क्या हिदायतें दी थीं। शायद यह कि वह शरारतें छोड़कर ढंग से काम करे और घर को अपना घर समझे। इस घर में नौकर-चाकर को बहुत प्यार और इज्जत से रखा जाता है। जो सब खाते-पहनते हैं, वही नौकर-चाकर खाते-पहनते हैं। अगर वह यहाँ रह गया तो ढंग-शऊर सीख जायेगा, घर के और लड़कों की तरह पढ़-लिख जायेगा और उसकी जिन्दगी सुधर जायेगी। निर्मला ने उसी समय कुछ व्यावहारिक उपदेश दे डाले थे। इस मुहल्ले में बहुत तुच्छ लोग रहते हैं, वह न किसी के यहाँ जाये और न किसी का काम करे। कोई बाजार से कुछ लाने को कहे तो वह 'अभी आता हूँ', कहकर अन्दर खिसक जाय। उसको घर के सभी लोगों से सम्मान और तमीज से बोलना चाहिए। और भी बहुत-सी बातें। अन्त में निर्मला ने बहुत ही उदारतापूर्वक लड़के के नाम में से 'दिल' शब्द उड़ा दिया।

परन्तु बहादुर बहुत ही हँसमुख और मेहनती निकला। उसकी वजह से कुछ दिनों तक हमारे घर में वैसा ही उत्साहपूर्ण वातावरण छाया रहा, जैसा कि प्रथम बार तोता-मैना या पिल्ला पालने पर होता है। सबेरे-सबेरे ही मुहल्ले के छोटे-छोटे लड़के घर के अन्दर आकर खड़े हो जाते और उसको देखकर हँसते या तरह-तरह के प्रश्न करते। 'ऐ तुम लोग छिपकली को क्या कहते हो?' 'ऐ, तुमने शेर देखा है।?' ऐसी ही बातें। उससे पहाड़ी गाने की फरमाइशें की जातीं। घर के लोग भी उससे इसी प्रकार की छेड़खानियाँ करते थे। वह जितना उत्तर देता था उससे अधिक हँसता था। सबको उसके खाने और नाश्ते की बड़ी फिक्र रहती।

निर्मला आँगन में खड़ी होकर पड़ोसियों को सुनाते हुए कहती थी—बहादुर, आकर नाश्ता क्यों नहीं कर लेते? मैं दूसरी औरतों की तरह नहीं हूँ, जो नौकर-चाकर को तलती-भूनती हैं। मैं तो नौकर-चाकर को अपने बच्चे की तरह रखती हूँ। उन्होंने तो साफ-साफ कह दिया है कि सौ, डेढ़-सौ महीनावारी उस पर भले ही खर्च हो जाय, पर तकलीफ उसको जरा भी नहीं होनी चाहिए। एक नेकर-कमीज तो उसी रोज लाये थे.....और भी कपड़े बन रहे हैं.....

धीरे-धीरे वह घर के सारे काम करने लगा। सबेरे ही उठकर वह बाहर नीम के पेड़ से दातुन तोड़ लाता था। वह हाथ का सहारा लिये बिना कुछ दूर तक तने पर दौड़ते हुए चढ़ जाता। मिनट भर में वह पेड़ की पुलई पर नजर आता। निर्मला छाती पीटकर कहती थी—अरे रीछ-बन्दर की जात, कहीं गिर गया तो बड़ा बुरा होगा। वह घर की सफाई करता, कमरों में पोंछा लगाता, अँगीठी जलाता, चाय बनाता और पिलाता। दोपहर में कपड़े धोता और बर्तन मलता। वह रसोई बनाने की भी जिद्द करता, पर निर्मला स्वयं सब्जी और रोटी बनाती। निर्मला को उसकी बहुत फिक्र रहती थी। उसकी उन दिनों तबीयत ठीक नहीं रहती थी, इसलिए वह कुछ दवा ले रही थी। बहादुर उसको कोई काम करते देखकर कहता था—माता जी, मेहनत न करो, तकलीफ बढ़ जायेगा। वह कोई भी काम करता होता, समय होने पर हाथ धोकर भालू की तरह दौड़ता हुआ कमरे में जाता और दवाई का डिब्बा निर्मला के सामने लाकर रख देता।

जब मैं शाम को दफ्तर से आता, तो घर के सभी लोग मेरे पास आकर दिन भर के अपने अनुभव सुनाते थे। बाद में वह भी आता था। वह एक बार मेरी ओर देखकर सिर झुका लेता और धीरे-धीरे मुस्कराने लगता। वह कोई बहुत ही मामूली घटना की रिपोर्ट देता।—बाबूजी, बहिन जी का एक सहेली आया था। या बाबूजी, भैया सिनेमा गया था। इसके बाद वह इस तरह हँसने लगता था, गोया बहुत ही मजेदार बात कह दी हो। उसकी हँसी बड़ी कोमल और मीठी थी, जैसे फूल की पंखुड़ियाँ बिखर गयी हों। मैं उससे बातचीत करना चाहता था, पर ऐसी इच्छा रहते हुए भी मैं जान-बूझकर बहुत गम्भीर हो जाता था और दूसरी ओर देखने लगता था।

निर्मला कभी-कभी उससे पूछती थी—बहादुर, तुमको अपनी माँ की याद आती है?

—नहीं।

—क्यों?

—वह मारती क्यों थी?—इतना कहकर वह खूब हँसता था, जैसे मार खाना खुशी की बात हो।

—तब तुम अपना पैसा माँ के पास कैसे भेजने को कहते हो?

—माँ-बाप का कर्जा तो जन्म भर भरा जाता है—वह और भी हँसता था।

निर्मला ने उसको एक फटी-पुरानी दरी दे दी थी। घर से वह एक चादर भी ले आया था। रात को काम-धाम करने के बाद वह भीतर के बरामदे में एक टूटी हुई बँसखट पर अपना बिस्तर बिछाता था। वह बिस्तरे पर बैठ जाता और अपनी जेब में से कपड़े की एक गोल-सी नेपाली टोपी निकालकर पहन लेता, जो बायीं ओर काफी झुकी रहती थी। फिर वह एक छोटा-सा आईना निकालकर बन्दर की तरह उसमें अपना मुँह देखता था। वह बहुत ही प्रसन्न नजर आता था। इसके बाद कुछ और भी चीजें उसकी जेब से निकलकर उसके बिस्तरे पर सज जाती थीं—कुछ गोलियाँ, पुराने ताश की एक गड्डी, कुछ खूबसूरत पत्थर के टुकड़े, ब्लेड, कागज की नावें। वह कुछ देर तक उनसे खेलता था। उसके बाद वह धीमे-धीमे स्वर में गुनगुनाने लगता था। उन पहाड़ी गानों का अर्थ हम समझ नहीं पाते थे, पर उनकी मीठी उदासी सारे घर में फैल जाती, जैसे कोई पहाड़ की निर्जनता में अपने किसी बिछुड़े हुए साथी को बुला रहा हो।

X X X X

दिन मजे में बीतने लगे। बरसात आ गयी थी। पानी रुकता था और बरसता था। मैं अपने को बहुत ऊँचा महसूस करने लगा था। अपने परिवार और सम्बन्धियों के बड़प्पन तथा शान-बान पर मुझे सदा गर्व रहा है। अब मैं मुहल्ले के लोगों को पहले से भी तुच्छ समझने लगा। मैं किसी से सीधे मुँह बात नहीं करता। किसी की ओर ठीक से देखता भी नहीं था। दूसरे के बच्चों को मामूली-सी शरारत पर डाँट-डपट देता। कई बार पड़ोसियों को सुना चुका था—जिसके पास कलेजा है, वही आजकल नौकर रख सकता है। घर के सवांग की तरह रहता है। निर्मला भी सारे मुहल्ले में शुभ सूचना दे आयी थी—आधी तनखाह तो नौकर पर ही खर्च हो रही है, पर रुपया-पैसा कमाया किसलिए जाता है? ये तो कई बार कह ही चुके थे कि तुम्हारे लिए दुनिया के किसी कोने से नौकर जरूर लाऊँगा.....वही हुआ।

निःसन्देह बहादुर की वजह से सबको खूब आराम मिल रहा था। घर खूब साफ और चिकना रहता। कपड़े चमाचम सफेद। निर्मला की तबीयत भी काफी सुधर गयी। अब कोई एक खर भी न टसकाता था। किसी को मामूली-से-मामूली काम करना होता, तो वह बहादुर को आवाज देता। 'बहादुर, एक गिलास पानी।' 'बहादुर, पेंसिल नीचे गिरी है, उठाना।' इसी तरह की फरमाइशें! बहादुर घर में फिरकी की तरह नाचता रहता। सभी रात में पहले ही सो जाते थे और सबेरे आठ बजे के पहले न उठते थे।

मेरा बड़ा लड़का किशोर काफी शान-शौकत और रोब-दाब से रहने का कायल था और उसने बहादुर को अपने कड़े

अनुशासन में रखने की आवश्यकता महसूस कर ली थी। फलतः उसने अपने सभी काम बहादुर को सौंप दिये। सबेरे उसके जूते में पालिश लगनी चाहिए। कालेज जाने के ठीक पहले साइकिल की सफाई जरूरी थी। रोज ही उसके कपड़ों की धुलाई और इस्त्री होनी चाहिए। और रात में सोते समय वह नित्य बहादुर से अपने शरीर की मालिश कराता और मुक्की भी लगवाता। पर इतनी सारी फरमाइशों की पूर्ति में कभी-कभी कोई गड़बड़ी भी हो जाती। जब ऐसा होता, किशोर गर्जन-तर्जन करने लगता, उसको बुरी-बुरी गालियाँ देता और उस पर हाथ छोड़ देता। मार खाकर बहादुर एक कोने में खड़ा हो जाता—चुपचाप।

—देख बे—किशोर चेतावनी देता—मेरा काम सबसे पहले होना चाहिए। अगर एक काम भी छूटा तो मारते-मारते हुलिया टाइट कर दूँगा। साला, कामचोर, करता क्या है तू? बैठा-बैठा खाता है।

रोज ही कोई-न-कोई ऐसी बात होने लगी, जिसकी रिपोर्ट पत्नी मुझे देती थी। मैंने किशोर को मना किया, पर वह नहीं माना तो मैंने यह सोचकर छोड़ दिया कि थोड़ा बहुत तो यह चलता ही रहता है। फिर एक हाथ से ताली कहाँ बजती है? बहादुर भी बदमाशी करता होगा। पर एक दिन जब मैं दफ्तर से आया तो मैंने किशोर को एक डण्डे से बहादुर की पिटाई करते हुए देखा। निर्मला कुछ दूरी पर खड़ी होकर 'हाँ-हाँ' कहती हुई मना कर रही थी।

मैंने किशोर को डाँटकर अलग किया। कारण यह था कि शाम को साइकिल की सफाई करना बहादुर भूल गया था। किशोर ने उसको मारा तथा गालियाँ दीं तो उसने उसका काम करने से ही इन्कार कर दिया।

—तुम साइकिल साफ क्यों नहीं करते?—मैंने उससे कड़ाई से पूछा।

—बाबूजी, भैया ने मेरे मरे बाप को क्यों लाकर खड़ा किया?—वह रोते हुए बोला।

मैं जानता था कि किशोर उसको और भी भद्दी गालियाँ देता था, लेकिन आज उसने 'सूअर का बच्चा' कहा था, जो उसे बरदाश्त न हुआ। निस्सन्देह वह गाली उसके बाप पर पड़ती थी। मुझे कुछ हँसी आ गयी। खैर, किशोर के व्यवहार को अच्छा नहीं कहा जा सकता, पर गृहस्वामी होने के कारण मुझ पर कुछ और गम्भीर दायित्व भी थे।

मैंने उसे समझाया—बहादुर, ये आदतें ठीक नहीं। तुम ठीक से काम करोगे तो तुमको कोई कुछ भी नहीं कहेगा। मेहनत बहुत अच्छी चीज है, जो उससे बचने की कोशिश करता है, वह कुछ भी नहीं कर सकता। रूठना-फूलना मुझे सख्त नापसन्द है। तुम तो घर के लड़के की तरह हो। घर के लड़के मार नहीं खाते? हम तुमको जिस सुख आराम से रखते हैं, वह कोई क्या रखेगा? जाकर दूसरे घरों में देखो तो पता लगे। नौकर-चाकर भरपेट भोजन के लिए तरसते रहते हैं। चलो, सब खत्म हुआ, अब काम-धाम करो.....

वह चुपचाप सुनता रहा। फिर हाथ-मुँह धोकर काम करने लगा। जल्दी वह प्रसन्न भी हो गया। रात में सोते समय वह अपनी टोपी पहनकर देर तक गाता रहा।

लेकिन कुछ दिनों बाद एक और भी गड़बड़ी शुरू हुई। निर्मला बहुत पतली-पतली रोटियाँ सेंकती थी, इसलिए वह रोटी बनाने का काम कभी भी बहादुर से नहीं लेती थी। लेकिन मुहल्ले की किसी औरत ने उसे यह सिखा दिया कि परिवार के लिए रोटियाँ बनाने के बाद वह बहादुर से कहे कि वह अपनी रोटी खुद बना लिया करे, नहीं तो नौकर-चाकर की आदत खराब हो जाती है, महीन खाने से उसकी आदत बिगड़ जाती है।

यह बात निर्मला को जँच गयी थी और रात में उसने ऐसा ही प्रयोग किया। वह अपनी रोटियाँ बनाकर चौके में से उठ गयी। बहादुर का मुँह उतर गया। वह चूल्हे के पास सिर झुकाकर चुपचाप खड़ा रहा।

—क्या हो गया, रे?—निर्मला ने पूछा।

वह कुछ नहीं बोला।

—चल, चुपचाप बना अपनी रोटियाँ। तू सोचता है कि मैं तुझे पतली-पतली, नरम-नरम रोटियाँ सेंक कर खिलाऊँगी? तू कोई घर का लड़का है? नौकर-चाकर तो अपना बनाकर खाते ही रहते हैं। तीता तो इनको इसलिए लग रहा है कि सारे घर के लिए मैंने रोटियाँ बनायीं, इनको अलग करके इनके साथ भेद क्यों किया? वाह रे, इसके पेट में तो लम्बी दाढ़ी है! समझ जा, रोटियाँ नहीं सेंकेगा तो भूखा रहेगा।

पर बहादुर उसी तरह खड़ा रहा तो निर्मला का गुस्से से बुरा हाल हो गया। उसने लपककर उसके माथे पर दो-तीन थप्पड़ जड़ दिये—सूअर कहीं के! इसीलिए तुझे किशोर मारता है। इसी वजह से तेरी माँ भी मारती होगी। चल बना रोटी.....

—मैं नहीं बनाऊँगा। मेरी माँ भी सारे घर की रोटियाँ बनाकर मुझसे रोटी सेंकवाती थी—वह रोने लगा था।

—तो क्या मैं तेरी माँ हूँ कि तू मुझसे जिद्द कर रहा है? घर के लड़कों के बराबर बन रहा है? मारते-मारते मुँह रँग दूँगी।

पर उसने अपने लिए रोटी नहीं बनायी। मुझे भी बड़ा गुस्सा आया। मैंने उसको डाँटा और समझाया। पर वह नहीं माना। रात भर वह भूखा ही रहा।

पर सबेरे उठकर वह पहले की तरह ही हँसने लगा। उसने अँगीठी जलाकर अपने लिए रोटियाँ सेंकी। अपनी बनायी मोटी और भद्दी रोटियों को देखकर वह खिलखिलाने लगा। फिर रात की बची हुई सब्जी से उसने खाना खा लिया।

लेकिन निर्मला का भी हाथ खुल गया था। वह उससे कुछ चिढ़ भी गयी थी। अब बहादुर से कोई भी गलती होती तो वह उस पर हाथ चला देती। उसको मारनेवाले अब घर में दो व्यक्ति हो गये थे और कभी-कभी एक गलती के लिए उसको दोनों मारते।

बरसात बीत गयी थी। आकाश दर्पण की तरह स्वच्छ दिखायी देता। मैंने बहादुर की माँ के पास चिट्ठी लिखी थी कि उसका लड़का मेरे पास मजे में है और मैं उसकी तनखाह के पैसे उसके पास भेज दिया करूँगा, लेकिन कई महीने के बाद भी उधर से कोई जवाब नहीं आया था। मैंने बहादुर से कह दिया था कि उसका पैसा यहाँ जमा रहेगा, जब वह घर जायेगा तो लेता जायेगा।

पर अब बहादुर से भूल-गलतियाँ अधिक होने लगी थीं। शायद इसका कारण मार-पीट और गाली-गलौज हो। मैं कभी-कभी इसको रोकना चाहता, फिर यह सोचकर चुप लगा जाता कि नौकर-चाकर तो मार-पीट खाते ही रहते हैं।

एक दिन रविवार को मेरी पत्नी के एक रिश्तेदार आये। वह बीबी-बच्चों के साथ थे। वह अपने किसी खास सम्बन्धी के यहाँ आये थे, तो यहाँ भी भेंट-मुलाकात करने के लिए चले आये थे। घर में बड़ी चहल-पहल मच गयी। मैं बाजार से रोहू मछली और देहरादूनी चावल ले आया। नाश्ता-पानी के बाद बातों की जलेबी छनने लगी। पर इसी समय एक घटना हो गयी।

अचानक उस रिश्तेदार की पत्नी नीचे फर्श पर झुककर देखने लगीं। फिर उन्होंने चारपाई के अन्दर झाँककर देखा। अन्त में कमरे के अन्दर गयीं और फर्श पर पड़े हुए कागजों को उठाकर जाँच-पड़ताल करने लगीं।

—क्या बात है?—मैंने पूछा।

रिश्तेदार की पत्नी जबरदस्ती मुस्कराकर मजबूरी में सिर हिलाते हुए बोली—क्या बतायें.....ग्यारह रुपये साड़ी के खूँट से निकालकर यहीं चारपाई पर रखे.....पर वे मिल नहीं रहे हैं.....

—आपको ठीक याद है न.....।

—हाँ-हाँ—खूब अच्छी तरह याद है। ये रुपये मैंने खूँट में बाँधकर रखे थे, रिक्शेवाले को देने के लिए खूँट खोला ही था, फिर वे रुपये चारपाई पर रख दिये थे कि चार रुपये की मिठाई मँगा लूँगी और कुछ बच्चों के हाथ पर रख दूँगी। रास्ते में कोई ढंग की दूकान नहीं मिली थी, नहीं तो उधर से ही लाती। किसी के यहाँ खाली-हाथ जाने में अच्छा भी नहीं लगता। बताइए, अब तो मैं कहीं की न रही।—फिर मेरी ओर झुककर धीमे स्वर में कहा था—जरा उससे पूछिए न! वह इधर आया था। कुछ देर तक वह यहाँ खड़ा रहा, फिर तेजी से बाहर चला गया था।

—अरे नहीं, वह ऐसा नहीं है,—मैंने कहा।

—यू डू नाट नो—दीज पीपुल आर एक्सपर्ट इन दिस आर्ट—रिश्तेदार ने कहा।

मैंने बहादुर की ओर तिरछी दृष्टि से देखा। वह सिर झुकाकर आटा गूँध रहा था। उसके चेहरे पर सन्तुष्टि एवं प्रफुल्लता थी। उसने ऐसा काम तो कभी नहीं किया, बल्कि जब कभी उसने दो-चार आने इधर-उधर पड़े देखे, तो उठाकर निर्मला के हाथ में दे दिये थे। पर किसी के दिल की बात कोई कैसे जान सकता है। न मालूम अचानक मुझे क्या हो गया और मैं गुस्से में आ गया।

—बहादुर! —मैंने कड़े स्वर में कहा।

—जी, बाबूजी।

—इधर आओ।

वह आकर खड़ा हो गया।

—तुमने यहाँ से रुपये उठाये थे?

—जी नहीं, बाबूजी!—उसने निर्भय उत्तर दिया।

—ठीक बताओ.....मैं बुरा नहीं मानूँगा।

—नहीं बाबूजी। मैं लेता, तो बता देता।

—तुम यहाँ खड़े नहीं थे?—रिश्तेदार की पत्नी ने कहा—फिर तेजी से बाहर चले गये। देखो भैया, सच-सच बता दो। मिठाई खरीदने और बच्चों को देने के लिए ये रुपये रखे थे। मैं तो बुरी फँसी। अब वापस जाने के लिए रिक्शे के भी पैसे नहीं।

—मैं तो बाहर नमक लेने गया था।

—सच-सच बता बहादुर! अगर नहीं बतायेगा तो बहुत पीटूँगा और पुलिस के सुपुर्द कर दूँगा—मैं चिल्ला पड़ा।

—मैंने नहीं लिया, बाबूजी—बहादुर का मुँह काला पड़ गया था।

पता नहीं मुझे क्या हो गया। मैंने सहसा उछलकर उसके गाल पर एक तमाचा जड़ दिया। मैं आशा कर रहा था कि ऐसा करने से वह बता देगा। तमाचा खाकर वह गिरते-गिरते बचा। उसकी आँखों से आँसू गिरने लगे।

—मैंने नहीं लिया.....

इसी समय रिश्तेदार साहब ने एक अजीब हरकत की—अच्छा छोड़िये, इसको पुलिस के पास ले जाता हूँ।—इतना कहकर उन्होंने बहादुर का हाथ पकड़ लिया और उसको दरवाजे की ओर घसीटकर ले गये। पर दरवाजे के पास उससे धीरे से बोले—देखो, तुम मुझे बता दो.....मैं कुछ नहीं करूँगा, बल्कि तुमको इनाम में दो रुपये दे दूँगा।

पर बहादुर ने इन्कार कर दिया। इसके बाद रिश्तेदार साहब दो-तीन बार उसको दरवाजे की ओर खींचकर ले गये, जैसे पुलिस को देने जा रहे हैं। लेकिन आगे बढ़कर वह रुक जाते और उससे धीमे-धीमे शब्दों में पूछ-ताछ करने लगे।

अन्त में हारकर उन्होंने उसको छोड़ दिया और वापस आकर चारपाई पर बैठते हुए हँसकर बोले—जाने दीजिये....ये सब बड़े घाघ होते हैं। किसी झाड़ी-वाड़ी में छिपा आया होगा या जमीन में गाड़ आया होगा। मैं तो इन सबों को खूब जानता हूँ। भालू-बन्दर से कम थोड़े होते हैं ये। चलिये, इतना नुकसान लिखा था।

इसके बाद निर्मला ने भी उसको डराया-धमकाया और दो चार तमाचे जड़ दिये, पर वह 'नहीं-नहीं' करता रहा।

इस घटना के बाद बहादुर काफी डाँट-मार खाने लगा। घर के सभी लोग उसको कुत्ते की तरह दुरदुराया करते। किशोर तो जैसे उसकी जान के पीछे पड़ गया था। वह उदास रहने लगा और काम में लापरवाही करने लगा।

एक दिन मैं दफ्तर से विलम्ब से आया। निर्मला आँगन में चुपचाप सिर पर हाथ रखकर बैठी थी। अन्य लड़कों का पता नहीं था, केवल लड़की अपनी माँ के पास खड़ी थी। अँगीठी अभी नहीं जली थी। आँगन गंदा पड़ा था। बर्तन बिना मले हुए रखे थे। सारा घर जैसे काट रहा था।

—क्या बात है?—मैंने पूछा।

—बहादुर भाग गया।

—भाग गया! क्यों?

—पता नहीं। आज तो कुछ हुआ भी नहीं था। सबेरे से ही बड़ा प्रसन्न था। हमेशा 'माताजी माताजी' किये रहा। दोपहर में खाना खाया। उसके बाद आँगन से सिल-बट्टा लेकर बरामदे में रखने जा रहा था कि सिल हाथ से छूटकर गिर गयी और दो टुकड़े हो गयी। शायद इसी डर से वह भाग गया कि लोग मारेंगे। पर मैं इसके लिए उसको थोड़े कुछ कहती? क्या बताऊँ, मेरी किस्मत में आराम ही नहीं.....।

—कुछ ले गया?

—यही तो अफसोस है। कोई भी सामान नहीं ले गया है। उसके कपड़े, उसका बिस्तरा, उसके जूते—सभी छोड़ गया है। पता नहीं उसने हमें क्या समझा? अगर वह कहता तो मैं उसे रोकती थोड़े? बल्कि उसको खूब अच्छी तरह पहना-ओढ़ाकर भेजती, हाथ में उसकी तनखाह के रुपये रख देती। दो-चार रुपये और अधिक दे देती। पर वह तो कुछ ले ही नहीं गया.....

—और वे ग्यारह रुपये?

—अरे वह सब झूठ है। मैं तो पहले ही जानती थी कि वे लोग बच्चों को कुछ देना नहीं चाहते, इसलिए अपनी गलती और लाज छिपाने के लिए वह प्रपंच रच रहे हैं। उन लोगों को क्या मैं जानती नहीं? कभी उनके रुपये रास्ते में गुम हो जाते हैं.....कभी वे गलती से घर पर छोड़ आते हैं। मेरे कलेजे में तो जैसे कुछ हौंड़ रहा है। किशोर को भी बड़ा अफसोस है। उसने सारा शहर छान मारा, पर बहादुर नहीं मिला। किशोर आकर कहने लगा—अम्माँ, एक बार भी अगर बहादुर आ जाता तो मैं उसको पकड़ लेता और कभी जाने न देता। उससे माफी माँग लेता और कभी नहीं मारता। सच, अब ऐसा नौकर कभी नहीं मिलेगा। कितना आराम दे गया है वह। अगर वह कुछ चुराकर ले गया होता तो सन्तोष हो जाता।

निर्मला आँखों पर आँचल रखकर रोने लगी। मुझे बड़ा क्रोध आया। मैं चिल्लाना चाहता था, पर भीतर-ही-भीतर मेरा कलेजा जैसे बैठ रहा हो। मैं वहीं चारपाई पर सिर झुकाकर बैठ गया। मुझे एक अजीब-सी लघुता का अनुभव हो रहा था। यदि मैं न मारता, तो शायद वह न जाता।

मैंने आँगन में नजर दौड़ाई। एक ओर स्टूल पर उसका बिस्तरा रखा था। अलगनी पर उसके कुछ कपड़े टँगे थे। स्टूल के नीचे वह भूरा जूता था, जो मेरे साले साहब के लड़के का था। मैं उठकर अलगनी के पास गया और उसके नेकर की जेब में हाथ डालकर उसके सामान निकालने लगा—वही गोलियाँ, पुराने ताश की गड्डी, खूबसूरत पत्थर, ब्लेड, कागज की नावें....।

अभ्यास प्रश्न

1. ''अमरकान्त की अधिकांश कहानियाँ प्रगतिशील जीवन-दृष्टि की परिचायक हैं''—'बहादुर' कहानी के आधार पर इस कथन की सत्यता प्रमाणित कीजिए।
2. समस्यामूलक कहानी के कला-पक्ष पर प्रकाश डालते हुए बताइए कि 'बहादुर' कहानी में किस समस्या को उठाया गया है?
3. बहादुर के घर में आने के बाद निर्मला और किशोर के स्वभाव और व्यवहार में क्या परिवर्तन आये? इसके कारणों की व्याख्या कीजिए।
4. इस कहानी का मुख्य सन्देश क्या है?
5. ''किसी चीज की अति बुरी होती है''—'बहादुर' कहानी के आधार पर उसकी समीक्षा कीजिए।
6. अमरकान्त की भाषा-शैली की विशेषताएँ लिखिए।
7. 'बहादुर' कहानी का सारांश अपने शब्दों में प्रस्तुत कीजिए। **[2020 ZH, ZI, ZN]**

अथवा 'बहादुर' कहानी की कथावस्तु प्रस्तुत कीजिए। **[2016 SC, 20 ZI]**

8. 'बहादुर' कहानी के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए। **[2020 ZK, ZL, ZM]**
9. कहानी-कला की दृष्टि से 'बहादुर' कहानी की समीक्षा कीजिए। **[2020 ZA, ZC, ZD, ZE]**
10. 'बहादुर' कहानी के मुख्य पात्र 'दिलबहादुर' का चरित्र-चित्रण कीजिए। **[2016 SB]**

अथवा 'बहादुर' कहानी के प्रमुख पात्र का चरित्रांकन कीजिए।

अथवा 'बहादुर' कहानी के प्रमुख पात्र की चारित्रिक विशेषताओं पर प्रकाश डालिए। **[2016 SF, 17 MF, MG, 19 CO]**

11. कहानी के तत्त्वों के आधार पर 'बहादुर' कहानी की समीक्षा कीजिए। **[2016 SB, SD, 17 MC, MD, ME]**
12. 'बहादुर' कहानी की प्रमुख स्त्री पात्र निर्मला का चरित्र-चित्रण कीजिए।
13. 'बहादुर' कहानी की कथोपकथन की दृष्टि से समीक्षा कीजिए।
14. 'बहादुर' कहानी के नायक के चरित्र पर प्रकाश डालिए।
15. 'बहादुर' कहानी के प्रमुख पात्र का चरित्र-चित्रण कीजिए। **[2019 CL, CR, 20 ZB]**
16. 'बहादुर' कहानी की कथावस्तु संक्षेप में लिखिए।

अथवा 'बहादुर' कहानी की कथावस्तु पर संक्षेप में प्रकाश डालिए।

17. 'बहादुर' कहानी के कथानक की विवेचना कीजिए। **[2018 AA, 19 CM, CN]**
18. 'बहादुर' कहानी के उद्देश्य पर प्रकाश डालिए।
19. 'बहादुर' कहानी के वैशिष्ट्य की विवेचना कीजिए।
20. 'बहादुर' कहानी के तथ्यों पर प्रकाश डालिए। **[2019 CP, 20 ZF]**

अथवा 'बहादुर' कहानी के तथ्यों को प्रस्तुत कीजिए।

21. कथानक के आधार पर 'बहादुर' कहानी के तत्त्वों पर प्रकाश डालिए।
22. 'बहादुर' कहानी की प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख कीजिए। **[2020 ZG]**